अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

हिन्दी नाटक में चरित्र सृष्टि का स्वरूप

प्रवेशिका पटेल, शोधार्थी
आचार्य नरेन्द्र देव नगर निगम महिला
महाविद्यालय हर्षनगर कानपुर उ०प्र०

साहित्य की प्राचीन विधाओं में से नाटक का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। इसे हम साहित्य का प्राण कह सकते है काव्य, उपन्यास आदि अन्य विधाये उसके रसात्मक और रमणीय स्थलों का उद्घाटन करके अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेती है। जीवन की जध्टिलता का जैसा सजीव चित्रण नाटक में सम्भव है वैसा काव्य, उपन्यास आदि में न तो किया जा सकता है न इसके लिए उनके विधान में कोई स्था ही होता है। किसी भी साहित्य कथा कृति में योजना के बिना पूर्ण रस की प्राप्ति असम्भ्व है, पात्र रस प्राप्ति का अनिवार्य माध्यम है। पात्र का केवल रस प्राप्ति का माध्यम होते है, अपितु लेखक के विचारों का वाहक भी पात्र होते है। पात्रों के क्रियाकलापों, वैचारिकता एवं परिवेशगत संघर्षो के द्वारा लेखक कथा को विकास देता हुआ एक निष्कर्ष प्रदान करता है। इसी से रस की सृष्टि होती है, तथा लेखकीय विचार की प्रतिष्ठा। प्राचीन भारतीय काव्यशास्त्रियों ने पात्र के महत्व को स्वीकार करते हुए लिखा है **"पात्र रूपी अरों का आवर्तन प्रवर्तन ही नाट्य चक्रों को गतिमयता प्रदान करता है परन्तु उन अरों को जोड़ने वाले बाह्य वृत्त के समान है एवं वस्तु तथा पात्रों के सम्मिलित प्रयास से जो गति उत्पन्न होनक चक्र को उत्तरोतर प्रयास से जो गति उत्पन्न होकर चक्र को उत्तरोत्तर लक्ष्य की और अग्रसर करती है वही रस है। "** [1] – इस प्रकार काव्यशास्त्रियों ने पात्र (चरित्र) की महत्ता को बताया है।

उचित पात्र योजना किसी भी कृति के सौष्ठव तथा साहित्य सफलता के लिए अति आवश्यक है, और पात्र का जीवन अनुभव से भरपूर व्यक्तित्व ही श्रेष्ठ चरित्र है। इस सन्दर्भ में डॉ० नगेन्द्र का कथन है – " **जीवन के अन्तरंग का व्यापक अनुभव,**

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

नलोक व्यवहार का ज्ञान, वस्तु व्यापार स्थिति, सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति जगत और जीवन के प्रति विकसित हुई अपने मौलिक दृष्टि, मानव जीवन की व्याख्या मनोविज्ञान की गहराई, रचनातन्त्र के अभ्यास से प्राप्त सिद्धहस्तता और लेखक के व्यक्तित्व का निर्माण करने वाले तत्वों अध्ययन पाणिज्य, भावुकता कल्पना आदि का उत्कर्षादि समस्त गुणों व शक्तियों का परिचय हमे उसकी चरित्र–सृष्टि के द्वारा ही प्राप्त होता है। " [2] अनेक प्रकार के पात्रो की संयोजना साहित्य में आदिकाल से हाती आ रही है, जिन्हे नाट्यचार्यो ने चरित्र के अनुसार भिन्न–भिन्न वर्गीकरण मे रखा है। पात्र–सृस्टि की शास्त्रीय परम्परा पर दृष्टि डालने पर स्पष्ट होता है कि पुरूष पात्र अथवा नायक को ही गल्प की पात्र योजना में सर्वाधिक महत्व दिया जाता रहा है नायिका तथा अन्य सहायक पात्र उससे गौण स्थान पाते है।

संस्कृत साहित्य के नाट्य परम्परा मे पात्र एक शास्त्रस्ममत पूर्व निर्धारित हैसियत के साथ नियोजन होते है, पारंपरिक पाश्चात्य साहित्य में भी एकाधिक परिवर्तन के साथ पात्र की पूर्व निर्धारित संयोजना ही कृति में आयोजित की जाती रही है **"किसी भी कथा कृति का मुख्य आधार पात्र ही होते है। रचना में संयोजित सभी अभिकर्ता पात्र होते, चाहे वह राजा हो या रंक। उन्हे नायक या चरित्र मूलतः पात्र ही होता है।"**[3] – इस विकास की प्रक्रिया में कुछ पात्र सिर्फ पात्र ही रह जाते है, और कुछ अपनी प्रमुखता के साथ चरित्र का रूप धारण कर लेते है। नाटक में पात्र तत्व सर्वाधिक महत्वपूर्ण और अनिवार्य तत्व है। बिना पात्र नाटक की कल्पना करना कुछ ऐसा ही इतिहास इस तथ्य का पुष्टि करता है कि हिन्दी में आदि जगत से लेकर आज तक के नाटकों में यह तत्व सर्वत्र विद्यमान है।

लोक मंगल एवं उच्च समष्टि सापेक्ष आदर्शो के प्रणेता हमारे शास्त्रीयताबद्ध साहित्य की यही सीमा रही कि नायक महान, धीरोदात्त, तेजस्वी दैवीय आदि सब रहा, किन्तु वह पात्र से आगे नही बढ़ पाया। एक वर्ग विशेष का प्रतिनिधि, जिसकी अस्मिता सिर्फ पात्र हाने तक ही होती है। जिन्हे अंगेजी में 'टाईप' और हिन्दी में 'स्थिर पात्र' भी कहा जाता है। " **सब कुछ चौखटे में बंधा सा, अतिसामान्य, दुरूस्त**

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

नीति, जैसे ज्यामितिय के चर्तुभुज। '' [4] अपना सब कुछ अपने वर्ग को सौपकर निश्चित आदमी ''जिसने अपने भीत के असामान्य के उग्र आदेश का पालन करने का मनोबल न हो। '' [5] इस गरिमामय वर्ग पात्रों में भी कुलीन पुरूष ही नेता, नायक पद का अधिकारी होता है।

प्रत्येक पात्र एक उद्देश्य से गढ़ा जाता है, चाहे वह श्रेष्ठ, अभिजात्य कुलोत्पन्न, धीर–वीर, अरिमर्दन सक्षम राजपुरूष हो अथवा एक घटना का सूचन प्रहरी हो। सदियों से आदर्शो का गुरूत्तर दायित्व ढ़ोते आए महानायक सिर्फ वर्ग पात्र कह देने से खारिज भी नही हो सकते। भारतीय एवं पश्चात्य साहित्य में चरित्र–सृष्टि की अवधारणा में देश एवं जीवन मूल्यों के अन्तर से जन्मी भिन्नता रही है, यही नही प्रत्येक काल में इस चरित्र सृश्टि की अवधाराण में देश एवं जीवन मूल्यों के अन्तर से जन्मी भिन्नता रही है, यही नही प्रत्येक काल में इस चरित्र सृष्टिगत अवधारण्धा में वैभिन्य आता रहा है। पात्र महत्ता ही चरित्र के कारण है। **''अन्यथा तो पात्र की वही स्थिति है जो भाव शून्य अनुभूति शून्य, सब परिस्थितियों में एक सी रहने वाली प्रस्तर प्रतिमा की होती है। पात्रों में सजीवता और विभिन्ता स्थापित करने वाला यह चरित्र ही है।**'' [6] वस्तुतः इसी कारण पात्र और चरित्र को सम्बद्ध कर दिया जाता है। अतः पात्र का पूर्ण विवेचन के बिना नही किया जा सकता

जीवन में संग्रह में हार और जीत की घटनाएँ हमारे चरित्र को निखारती है, पर इस हार जीत में क्या हमारे चरित्र का किसी अंश में भी हाथ नही रहता कभी मानव जी परिस्थितियाँ उसके चरित्र को निखारती है और कभी चरित्र घटनाओं को उभारता है। नाटक में चरित्र को घटनाओं से या घटनाओं को उभारता है। नाटक में चरित्र को घटनाओं से या घटनाओं को चरित्र से अलग–अलग करके उनकी तुलना करने का प्रयत्न उतना ही घातक है, जितना किसी व्यक्ति के नाक और कान की तुलना करके उनकी तुलना करते हुए एक को आवश्यक और दूसरे को अनावश्यक ठहरा देना। वास्तव में नाटक एक जीवित वस्तु है – उसके प्रत्येक अंग में दूसरे अंगो का कुछ न कुछ अंश अवश्य निहित रहता है। किसी पात्र को या नायक को ममिमावान

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

करने या न करने का प्रश्न नाटक में उठता ही नही। कोई पात्र जैसा है, नाटक उसे वैसा ही चित्रित करने का प्रयत्न करता है। नाटक पात्रों की पराजयों को उतनी ही तन्मयता से चित्रित करता है, जितनपी तन्मयता से उनकी विजयों को उनके अवगुणो को उतना ही महत्व देता है कई बार यह मान लिया जाता है कि रंगमंच का समबन्ध पात्रों की क्रियाशीलता से तथा उससे उत्पन्ना घटनाओं से इतना अधि है कि नाटक में चरित्र–चित्रण का स्थान गौण समझा जाना चाहिए। परन्तु वास्तव में में पात्रों का सबसे अधिक महत्व यदि किसी साहित्य प्रकार में है तो वह नाटक है जिसका अभिनय पात्रों के बिना हो नही सकता। नाटककार स्वंय तो रंगमंच पर आना नही और जब तक रंगमंच पर कोई आये नही तब तक नाटक का आरम्भ कैसे–कैसे नाटक के प्रारम्भ से लेकर अन्त कर एक या अनेक पात्र रंगमंच पर आकर कुछ न कुछ करते रहते है। क्या उनके क्रिया कला में उनका चरित्र नही झलकता। रंगमंच पर आये हुए प्रत्येक पात्र का आकार, प्रकार , आचार व्यवहार तथा कथोपकथन आदि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में उसके चरित्र का ही तो चित्रण करते हैं जहा1 वे ऐसा नही करते वहां नाटक में कार्य की एकता के भंग होने की संभावना की बनी रहती है। कार्य की एकता नाटक का प्राण है।

चरित्रों का पदलता स्वरूप भी हिन्दी नाटक की एक बहुत बड़ी उपलब्धि रही है। लेखकों ने चरित्रों को खुला छोड़ दिया। चरित्र के लिए कथानक की गाठें ढ़ीली करनी होगी, ताकि चरित्र संपूर्णता के साथ प्रस्तुत हो सके। एक रचनाकार की अनुभूति चरित्रों को अवश्य निखारती है। इसमें संदेह नही कि व्यक्ति के चरित्र का अल्प अंश ही उसकी व्यक्त क्रिया प्रक्रिया में प्रतिबिंबित हो पाता है, और उसका शेष भाग, जो उसके व्यक्त को धीरे धीरे उछाड़ने मे ही चरित्र–चित्रण की सार्थकता है। पर यह नही भूलना चाहिए कि यदि मानव चरित्र वही नही जो व्यक्त है, तो मानव के अव्यक्त चरित्र को भी समूचा नही कहा जा सकता। जिस प्रकार हिमनद का जल के ऊपर वाला व्यक्त भाग और जल मग्न अव्यक्त भाग दोनो मिलकर ही पूरा हिमनद बनता है उसी प्रकार मानव चरित्र को व्यक्त और अव्यक्त दोनो रूपों में से कोई भी

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

आने आप में पूर्ण नही देनो ही एक दूसरे के पूरक है। अरस्तु के अनुसार चरित्र–चित्रण का मूल आधार है – '' **पात्रो का चारित्रय वह है जिसके आधार पर हम अभिकर्ताओं में कुछ गुणों का आरोप करते है।** '' [7] सफल त्रासदी के नायक के लिए अरस्तु ने ऐसे पात्र का सृजन औचित्यपूर्ण माना है, जिसमे न तो अति उत्तमता हो न ही निरी दुष्टता/पात्र एवं चरित्र ही किसी नाट्य–कृति की सफलता–विफलता के मूलाधार है। चरित्र तत्व ही वह उपादान है, जिसके माध्यम से किसी भी कृति में युगीन जटिल, अनुभूत तथा उत्थान–पतन मूलक प्रवृत्तियों को वाणी जी जाती है। निष्कर्षतः डॉ० बेचन के कथन को दृष्टत्य करना समीचीन होगा कि – ''**चरित्र या पात्र ही किसी कृति के भाग्य विधाता होते है।** '' [8] इसमें कोई संदेह नही कि पात्र और चरित्र कथा की कल्पना नही का जा सकी। वास्तव में, चरित्र चित्रण की सफलता बहिरंग तथा अतंरंग चित्रण के समन्वय मे है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. जयदेव तनेजा – समसामायिक नाटकों में चरित्र सृष्टि पृष्ठ –28
2. डॉ० नगेन्द्र – भारतीय नाट्य साहित्य – पृष्ठ 312
3. जयदेव तनेजा – समसामयिक नाटकों में चरित्र सृष्टि –पृष्ठ 29
4. जैनेन्द्र कुमार – साहित्य का श्रेय और प्रेय – पृष्ठ 176
5. मुक्तिबोध – एक साहित्यिक की डायरी – पृष्ठ 77
6. डॉ० सुजाता – हिन्दी उपन्यासों के असामान्य चरित्र – पृष्ठ 23
7. डॉ० नगेन्द्र – अरस्तु का काव्यशास्त्र – पृष्ठ 83
8. डॉ० वेचन – आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और चरित्र–विकास, पृष्ठ 46